सन्देश संख्या 338

दिनांक : सितम्बर 17, 2017
जमशेदपुर

कृष्ण-प्रक्रिया

गुरुपूर्णिमा महोत्सव में गुरु शरीर के आगमन के उपरांत जुलाई 2017 को सत्यलोक में एक घटना घटी थी । निम्न संदेश एक शिष्य द्वारा इस घटना का विवरण है जिसका वह समझदारी की उर्जा में साक्षी था और जिनके शरीर में स्वाध्याय की प्रक्रिया घटित हुई अत: जैसे अन्य स्वाध्याय प्रक्रिया के संदेश साझा होते आये हैं इसे भी एक संदेश के रूप मे साझा किया जा रहा है ।

घटनाक्रम

श्रावण का पवित्र महीना था। 12 जुलाई 2017 की शाम थी । वाराणसी की पवित्र भूमि पर अवस्थित 'सत्यलोक' का प्रांगण, गुरुपूर्णिमा के हर्षोल्लास के पश्चात असीम शांति का संदेश दे रहा था। एक अद्भुत सन्नाटा था किंतु उस सन्नाटे में कोई उदासी नहीं थी, बल्कि ना जाने क्यों शरीर उस वातावरण में पुलकित हो रहा था। उसी प्रांगण में कुछ शिष्य बैठे थे, तभी गुरुजी (श्री शिवेंदु लाहिड़ी) का आगमन एक भक्त के घर से लौटने के क्रम में हुआ, मानो साक्षात कृष्ण का पदार्पण हुआ हो। भक्त, शिष्यों को देख गुरुजी भी वहीं मंदिर के सामने बरामदे में बैठ गए और भक्तों से कुछ बातें होने लगी। गुरु-वाणी को सुनने आए गुरुभक्त भला अपनी नजर उनके मुखारविन्द से कैसे हटा सकते थे? एकाग्रमय वातावरण में धर्म और अध्यात्म की कुछ स्वत:स्फूर्त बातों का श्रवण हो रहा था। इस सत्संग में आंध्रप्रदेश से आए एक युवा दंपत्ती, कुछ पुराने क्रियावान् और एक वेशधारी साधु लंबी दाढ़ी, धोती-कुर्ता का लिवास और गले में रुद्राक्ष की माला पहने बैठे थे। गुरुजी की अमृतवाणी की वर्षा के पश्चात गुरुजी अपने विश्राम स्थल पर चले गए। तभी शिष्य मंडली में कुछ हलचल मची और पता चला कि वहां बैठे उस युवा दंपत्ती का हैंडबैग चोरी हो गया है, जिसमें 4500 रुपये और उनके क्रेडिट कार्ड वगैरह थे। ऐसे पवित्र माहौल में चोरी का काम कैसे संभव है? घटनाक्रम पर अवलोकन करने पर समझ में आया कि वो वेशधारी साधु सत्संग के मध्य ही उठकर चले गए थे। लेकिन किसी भी शरीर में साधु पर शक करने की दृष्टि ना थी। क्योंकि हमारा शरीर पूर्व अवधारणाओं, सामाजिक नीतियों एवं अनुबंधों से इतना बंधा होता है कि इन से बाहर निकल पाना नहीं हो पाता।

ततक्षण इस घटना की पूर्ण जानकारी गुरुजी को भी मिली। उन्होंने घटनाक्रम सुनते ही कहा कि "बैग निश्चित रुप से उस तथाकथित साधु ने ही चुराया है।" यह कहने का साहस तो उसी शरीर में हो सकता है जो सारे अनुबंधनों से मुक्त हो जब शरीर हर बंधनों से मुक्त होता है तो वह सत्य का दर्शन करने में सक्षम होता है। फिर क्या था? गुरुजी ने वहां उपस्थित अपने दो क्रियावान् शिष्यों श्री विजय बाजपेयी एवं श्री विष्णु प्रसाद से अनुरोध किया कि वे तत्काल उस स्वामी वेशधारी दुष्ट का पता लगाएं तथा उस सत्यान्वेषी सज्जन दंपति का बैग और बटुवा वापस दिलाएं। इस कार्य के लिए अगर किसी भी बल का प्रयोग करना पड़े तो वैसा किया जाए इसका भी संकेत दिया। संकेत पाते ही दोनों शिष्य दौड़ पड़े।

सोनारपुरा में ही एक सन्यासी की सहायता से उस वेशधारी के आश्रम ठिकाने का पता चला। उस आश्रम में पहुंच कर वहां के एक संन्यासी के सहयोग से उसके कमरे का दरवाजा मुश्किल से खुलवाया गया किंतु उन दोनों को देखकर वह साधु पुनः दरवाजा बंद करने लगा। गुरुजी के संकेतानुसार बलपूर्वक दोनों शिष्य उस कमरे में जबरन घुस गए और 'सीसीटीवी कैमरे में बैगचोरी की घटना दर्ज है' ऐसा भय दिखाकर उनसे चोरी किया बैग वापस लिया, किंतु उसमें ₹ 500 ही थे। पुनः मारने-पीटने की धमकी और पुलिस केस के भय का दृश्य दिखा कर बिस्तर की तलाशी ली गई तो उसमें छुपाए गए बाकी रकम और क्रेडिट-कार्ड भी प्राप्त हो गए। भविष्य में ऐसा ना करने की चेतावनी देकर दोनों शिष्य सामान लेकर उस दंपत्ती को सारा सामान वापस कर सत्यलोक पहुंचे। उधर यह घटना घट रही थी और इधर इस बीच गुरुजी कुछ शिष्यों के साथ

'परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम। धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।'

गीता के इस श्लोक की पुनरावृति कर रहे थे, जैसे कृष्ण-प्रक्रिया का आवाहन हो रहा हो। ज्यों ही यह संदेश मिला कि सामान मिल गया है उन्होंने एक-एक कर दोनों शिष्यों के समक्ष हाथ जोड़कर इसी श्लोक को दुहराया, उनके चरण स्पर्श किए और गले लगाकर कुछ देर तक अश्रुपात करते रहे। इस दृश्य को देख सभी लोग अचंभित थे। यह घटना तो बस छोटी सी लगती है किंतु इसकी गहराई वैसी ही है जैसे कि "हरि अनंत हरि कथा अनंता"| यहां घटना तीन शरीर की है।

स्वाध्याय

पहला शरीर उसका है जिनका सामान चोरी हुआ था। यहां चोरी होना इसलिए संभव हो पाया क्योंकि उस शरीर में अपने सामान के प्रति जागरूकता नहीं थी। कभी-कभी हम वातावरण के प्रभाव में यह सोच बैठते हैं कि अरे ! ऐसे पवित्र माहौल में सामान कौन लेगा? और हम बेफिक्र हो जाते हैं, शरीर से जागरण छूट जाता है। ज्यों ही जागरण का छूटना होता है त्यों ही गड़बड़ी शुरू होती है और दुष्टता का जन्म होता है। अगर उस वक्त भी जागरण बना रहता तो उस साधु के चौर्य कर्म की संभावना ना होती। हम यह कैसे भूल सकते हैं कि जब जगदम्ब स्वरूपणी सीता के शरीर से जागरण छूटा तो एक वेषधारी साधु के द्वारा ही उसका हरण हो गया।

दूसरा शरीर उन दो शिष्यों का है जो 'गुरुजी के बताने पर कि यह चोरी उस साधु ने की है' दौड़ पड़ते हैं। इन दो शरीर में अर्जुन की प्रक्रिया काम कर रही है जो समर्पित है और हर मानवीय मूल्यों से ऊपर सत्य की स्थापना के लिए उपलब्ध है जैसे राम-काज को अंजाम देने हेतु हनुमान विशाल समुद्र पर छलांग लगा जाते हैं।

तीसरा अनमोल शरीर 'गुरुजी' का है जो कृष्ण की उर्जा से दीप्तमान जागरण की अवस्था में हैं, जो सत्य की स्थापना के लिए अर्जुन जैसे शरीर (उन दोनों शिष्यों) का प्रयोग कर रहे हैं। द्वंदरहित शरीर में जो खालीपन है वहीं कृष्ण-प्रक्रिया अपना काम करती है इसलिए, तो उन शिष्यों को भेजने के बाद गुरुजी 'परित्राणाय साधूनां' श्लोक का आवाहन कर रहे हैं। इस श्लोक का अर्थ है-

"सरल (साधु) पुरुषों के उद्धारार्थ, दुष्कर्मियों के विनाशार्थ और सच्चे धर्म की पुनः स्थापना करने के लिए 'मैं' युग-युग में प्रकट हुआ करता हूं।" अनाम अस्तित्व की ये ऊर्जा अर्जुन जैसे शरीर के माध्यम से अपना काम कराती है उस ऊर्जा का कोई आकार नहीं है। लेकिन बिना आकार के जगत का काम संभव नहीं इसलिए वैसे खाली शरीर जो द्वंदमुक्त हो, उसकी तलाश रहती है, ताकि उसे माध्यम बनाया जा सके। रामचरितमानस में उद्धृत है कि

"बिनु पग चले सुने बिनु काना। कर बिनु कर्म करहिं विधि नाना।"

अर्थात बिना पैर के "वह" (अनाम अस्तित्व) चलता है, बिना कान के वह सुनता है और बिना हाथ के वह नाना प्रकार के काम करता है। इस घटना क्रम में जब 'शिष्य' सफल होकर लौटते हैं तो 'गुरुजी' दोनों के चरण स्पर्श कर पुनः उसी श्लोक 'परित्राणाय साधुनां' का उच्चारण करते हैं और अश्रुपात की झड़ी लग जाती है। यहां यह आश्चर्य की बात है कि 'गुरु' शिष्य को प्रणाम कर रहे हैं। ऐसा क्यों? तो ऐसा इसलिए क्योंकि जिस ऊर्जा और जिस कृष्ण-प्रक्रिया को उन्होंने स्थापित किया था वह शिष्य का शरीर था। अस्तित्व ही अस्तित्व को प्रणाम कर रहे हैं। यह एक अद्भुत दृश्य है।

लेकिन, यहां भी जागरण का विषय है और वह यह है कि जिस शरीर को प्रणाम हो रहा है, यदि उस शरीर में यह भाव आ जाए कि अरे ! लगता है मुझमें कुछ बात है तभी तो गुरुजी प्रणाम कर रहे हैं तो हे साधक ! ठहर जाना। यहीं पर अंतर्जगत में 'मैंपना' का प्रादुर्भाव हो जाएगा और तुम फिसल सकते हो। लेकिन, अगर शरीर को सिर्फ माध्यम होने का बोध हो जाए तो यही काम निष्काम हो जाएगा और सब कुछ करते हुए भी मैं कुछ नहीं कर रहा का बोध- (अकर्ता-भाव) का जन्म हो जाएगा जो 'क्रियायोग' का सार है और जिस के उदय के लिए न जाने कितने समय लग जाते हैं।

शुद्ध साधुवेश में भी दुराचारी दुर्योधन पनप सकता है तो बिल्कुल साधारण वेशभूषा में भी कृष्ण जन्म ले सकते हैं। हर जन्म के साथ एक कृष्ण का भी जन्म होता है लेकिन यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमें उसकी झलक नहीं मिल पाती। अंत में गुरु जी ने कहा गीता उपनिषदों का सार है। उपनिषद गाय है तो गीता दूध है। कृष्ण (गुरु) दूध दुहने वाले हैं तो अर्जुन (शिष्य) दुग्धपान करने वाला बछड़ा।

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनंदन: । पार्थो वत्स: सुधिर्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महद ।

इसलिए हे मानव ! जागरण में रहना ही अंतर्यात्रा का सार है। जागरण ही सत्य है; सत्य ही शिव है; शिव ही सुंदर है। "सत्यम शिवम सुंदरम"।

"जय जागरण"